वैश्वीकरण का संकट और विकल्प की खोज- IN HINDI

By अशीष कोठारी | Ashish Kothari on Aug. 05, 2026 in Perspectives

(Vaishvikaran ka sankat aur vikalp ki khoj)

मौजूदा समय में दुनिया खाड़ी युद्ध, विनाशकारी जलवायु और पारिस्थितिकीय पतन, बढ़ती असमानताओं, नरसंहारों और अन्य सामूहिक अत्याचारों से पैदा हुए संकटों से जूझ रही है। संयुक्त राष्ट्र जैसी बहुपक्षीय संस्थाएं इन संकटों को दूर करने में असमर्थ दिखाई दे रही हैं। जी77, ब्रिक्स आदि जैसे अंतर्राष्ट्रीय मंच, जिन्हें अमेरिका की साम्राज्यवादी शक्ति का प्रतिकार करने वाली शक्ति माना जाता था, बिखरी हुई हैं क्योंकि उनके कुछ प्रमुख सदस्य स्वयं सत्तावादी, विनाशकारी गतिविधियों में शामिल हैं या उन दबंगों के साथ मेलजोल बढ़ा रहे हैं जिनका मुकाबला करने के लिए इन संस्थाओं को बनाया गया था (यूक्रेन में रूसी आक्रामकता या भारतीय प्रधानमंत्री मोदी की ट्रंप और नेतन्याहू के साथ दोस्ती और ईरान पर हमले की निंदा न करना, इसका उदाहरण है)। 30 वैश्विक सम्मेलनों के बाद भी, हम जलवायु संकट से निपटने से बहुत दूर हैं। खरबपति लगातार समृद्ध हो रहे हैं, जबकि आधी दुनिया कई तरह से तंगहाल है। हम जैसे लोग जो एक बेहतर दुनिया की खोज में हैं, इन सब से कैसे निपटें? क्या इस अंधेरी सुरंग के अंत में कोई उम्मीद की किरण दिखाई देती है?

ग्रीक भाषा में 'संकट' का मूल शब्द 'क्रिसिस' है, जिसका अर्थ 'अवसर' है। मौजूदा स्थिति को इस परिप्रेक्ष्य में देखने के लिए हमें कई कदम उठाने होंगे। सबसे पहले, हमें यह समझना होगा कि हम एक गहरे दलदल में फंसे हुए हैं, इसलिए नहीं कि राष्ट्र-राज्यों के बीच समझौतों और आर्थिक वैश्वीकरण पर आधारित 'विश्व व्यवस्था' में गड़बड़ी हो रही है। बल्कि, इसका कारण यह है कि ऐसी व्यवस्थाएं स्वयं संघर्ष, गैर टिकाऊ और गैर बराबरी को जन्म देती हैं। जब हम निरंतर आर्थिक विकास (जिसे सकारात्मक रूप देने के लिए 'विकास' कहा

जाता है) की विचारधारा को अपनाते हैं, जो सीमित संसाधनों वाली दुनिया में सभी देशों के लिए हासिल करना असंभव है; जब यह जीवाश्म ईंधन के लगातार बढ़ते उपयोग पर आधारित है; और जब आर्थिक और राजनीतिक सत्ता की बागडोर मुट्ठी भर खरबपतियों के हाथों में है, तो राष्ट्र-राज्यों का आपस में लड़ना जरूरी हो जाता है।

ये संघर्ष आर्थिक हो सकते हैं, जैसे कि वित्तीय और ईंधन भंडार तथा जमीन पर नियंत्रण के लिए संघर्ष; या राजनीतिक हो सकते हैं, जैसे कि शासन व्यवस्थाओं द्वारा अन्य देशों के चुनावों को प्रभावित करने के लिए तकनीकी और अन्य साधनों का उपयोग; या सैन्य हो सकते हैं, जैसे कि वर्तमान युद्ध हो रहे हैं। हम, ये तीनों ही रूप ले रहे हैं, जिसका सबसे अच्छा उदाहरण हाल के समय में अमेरिका और इज़राइल द्वारा दिखाई गई आक्रामकता है। प्रमुख धर्म और उनके बीच ऐतिहासिक या हालिया शत्रुता (जो फिर से मुट्ठी भर लोगों द्वारा नियंत्रित है) इस विषैले मिश्रण को और बढ़ा देती है।

इस नजरिए से हमें यह एहसास होता है कि समझदारी केवल वैश्वीकृत विकास, राष्ट्र-राज्यों और कट्टरपंथी धर्मों की प्रमुख विचारधाराओं को चुनौती देकर ही प्राप्त की जा सकती है। साथ ही, गैर बराबरी और प्रभुत्व की उन संरचनाओं और संबंधों को भी चुनौती दी जा सकती है जिनमें ये निहित हैं: पितृसत्ता (क्या आपने गौर किया है कि एक-दूसरे के खिलाफ युद्ध करने वाले लगभग सभी 'नेता' पुरुष हैं?), नस्लवाद और प्रजातिवाद (यह धारणा कि दुनिया मनुष्यों के लिए बनी है)। फिलहाल, युद्धों, पारिस्थितिकीय विनाश आदि के खिलाफ प्रतिरोध आंदोलन कमजोर पड़ते दिख रहे हैं, लेकिन इतिहास हमें बताता है कि सबसे निरंकुश तानाशाहों को भी उखाड़ फेंका जा सकता है। हमें प्रतिरोध करना ही होगा!

दूसरा कदम है कि इस तरह के प्रतिरोध को उस तरह की दुनिया के बारे में हमारी अपनी धारणा के साथ जोड़ना, जो हम चाहते हैं। हम जानते हैं कि हम किस बात का विरोध कर रहे हैं—और सुसंगत रहने के लिए, जहां हम ईरान पर अमेरिका/इज़राइल के युद्ध का विरोध करते हैं, वहीं हम पिछले कुछ दशकों से निरंकुश ईरानी शासन के पीड़ितों के साथ भी खड़े हैं। हमें यह भी बेहतर ढंग से समझने की ज़रूरत है कि हम किस बात का समर्थन कर रहे हैं। मैं लेख के आखिरी हिस्से में इस पर फिर से चर्चा करूंगा, लेकिन पहले, उन प्रक्रियाओं पर एक नज़र डालते हैं, जिन्होंने हम सभी को बाहरी झटकों के प्रति अधिक संवेदनशील बना दिया है।

वैश्वीकरण और असुरक्षा

पिछले कुछ दशकों में आर्थिक वैश्वीकरण बढ़ता दिखाई दे रहा है। विकास के नाम पर, कथित तौर पर उन देशों में गरीबी और अन्य प्रकार के अभावों को कम करने में मदद करने के लिए जिन्होंने अभी तक औद्योगिक आधुनिकता के फल

नहीं चखे थे, विश्व बैंक और आईएमएफ जैसी संस्थाओं ने, अमेरिका और यूरोप के समर्थन से, वैश्वीकरण की विचारधारा को दुनिया भर में फैलाया है। ऐसी संस्थाओं से लिए गए कर्जों ने इस प्रक्रिया को और मजबूत किया है। कई क्षेत्रों और देशों ने हाल के इतिहास में अलग-अलग समय पर इसका अनुभव किया है, लेकिन उन सभी में एक बात समान है, वह है कर्ज में विनाशकारी वृद्धि; श्रम, मानवाधिकार और पर्यावरण से संबंधित नियमों और कानूनों का कमजोर होना; लंबी दूरी की ईंधन आपूर्ति और आर्थिक संबंधों पर अत्यधिक निर्भरता; और भी बहुत कुछ। इसका एक स्पष्ट परिणाम यह है कि जहां अमेरिका-इजरायल के बम दुनिया के बाकी हिस्सों को नहीं मार रहे हैं, वहीं ईरान पर उनके युद्ध ने खाड़ी देशों से बहुत दूर स्थित देशों में भी सदमे की लहरें पैदा कर दी हैं।

मेरे सहयोगी असीम श्रीवास्तव और मैंने अपनी पुस्तक "चर्निंग द अर्थ: द मेकिंग ऑफ ग्लोबल इंडिया" में लिखा है कि कैसे वैश्वीकरण ने भारत को खतरनाक रूप से असुरक्षित बना दिया है। हमारी कहानी एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका के दर्जनों देशों की कहानी से मिलती-जुलती है, हालांकि सार की अपेक्षा विवरण में अधिक अंतर है। यह लाभ के लिए कॉरपोरेट लालच की कहानी है, जिसे उन राष्ट्र-राज्य सरकारों का समर्थन प्राप्त है. जिन्हें विकास के नाम पर नवउदारवादी आर्थिक नीतियों को तेजी से बेचा गया है, या अपनाने के लिए मजबूर किया गया है।

इसी विचारधारा ने इन देशों की सरकारों को आंतरिक उपनिवेशीकरण में शामिल कर दिया है। दर्जनों देश जो कभी यूरोपीय शक्तियों द्वारा उपनिवेशित थे, उन्होंने अपने आंतरिक 'सीमांतों' (मूल्यवान वाणिज्यिक संसाधनों वाले क्षेत्र जो अक्सर स्वदेशी लोगों या अन्य पारंपरिक स्थानीय समुदायों द्वारा बसे होते हैं और/या जैव विविधता और वन्यजीवों के लिए महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं) को शोषण के क्षेत्रों में बदल दिया है। कुछ ने तो अन्य राष्ट्रों और क्षेत्रों को उपनिवेशित करने का रुख भी कर लिया है, उपनिवेशित इतिहास को आसानी से भुला दिया है, जिसके परिणामस्वरूप भूमि और खनिजों पर कब्जा और स्थानीय समुदायों और वन्यजीवों का उजाड़ा गया है। नव-उपनिवेशवाद के ऐसे उदाहरणों में वे गतिविधियां शामिल हैं जो चीनी और भारतीय कंपनियां अफ्रीका और लैटिन अमेरिका में कर रही हैं।

इन सभी प्रक्रियाओं में, समुदाय, और कभी-कभी तो पूरा देश ही, ऊपर वर्णित प्रकार के झटकों के प्रति काफी अधिक संवेदनशील हो जाते हैं। इसका समाधान दो प्रकार से किया जा सकता है: वैश्वीकृत विकास और नव-उपनिवेशवाद का विरोध करना, जिसमें कॉरपोरेट और सरकारी एजेंसियां भी शामिल हैं, और बुनियादी आर्थिक और सामाजिक जरूरतों और आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए समुदाय-आधारित विकल्पों की ओर बढ़ना।

मौलिक स्थानीयकरण की ओर

कल्पना कीजिए कि हम एक ऐसे समुदाय में होते जो जीवाश्म ईंधन पर निर्भर नहीं होता और जहां हमारी अधिकांश बुनियादी ज़रूरतें आसपास के क्षेत्र से ही पूरी हो जातीं। हम दुनिया के किसी हिस्से में होने वाले युद्धों, कोविड जैसी वैश्विक महामारियों, या 2008 में हुई मौद्रिक और वित्तीय प्रणालियों के पतन जैसी घटनाओं से होने वाली बाधाओं से अपेक्षाकृत मुक्त होते। क्या यह एक आदर्शवादी कल्पना है? खैर, ऐसे सैकड़ों, संभवतः हजारों उदाहरण हैं, जहां समुदाय न केवल इन झटकों से बच पाए हैं बल्कि वास्तव में फले-फूले भी हैं। उदाहरण के लिए, कोविड महामारी के दौरान, विकल्प संगम और ग्लोबल टेपेस्ट्री ऑफ आल्टरनेटिव्स जैसे नेटवर्क ने ऐसी लचीलेपन के लगभग 100 उदाहरणों का दस्तावेजीकरण किया, जो दुनिया भर में देखी जाने वाली स्वास्थ्य और आर्थिक गिरावट (जो महामारी के साथ-साथ तालाबंदी के कारण भी हुई थी) के विपरीत थे।

इन उदाहरणों से मिलने वाला मुख्य सबक यह है कि ऐसे समुदाय और समूह कोविड से बेहतर तरीके से बच पाए, जब उनके पास निर्णय लेने की मजबूत सामुदायिक प्रणालियां थीं (जो महामारी से पहले से चली आ रही थीं या महामारी आने पर तुरंत स्थापित की गई थीं), बीमारी की रोकथाम और इलाज के सामूहिक साधन, मजबूत पारस्परिक सहायता प्रणालियां, भोजन, पानी और अन्य ऐसी तात्कालिक जरूरतों में स्थानीय आत्मनिर्भरता, और आजीविका बनाए रखने में सहायक स्थानीय आर्थिक आदान-प्रदान। यह सबक कई अन्य आपदा स्थितियों में भी सीखा गया है, जिनमें युद्ध और संघर्ष, सूखा और बाढ़, बड़े पैमाने पर आर्थिक संकट इत्यादि शामिल हैं।

ऐसे आयोजनों के अलावा, दुनिया भर में हजारों पहलें निम्नलिखित में से एक या अधिक पहलुओं को दिखा रही हैं-

-भोजन, पानी, ऊर्जा, आवास, स्वच्छता और विनिमय जैसे महत्वपूर्ण पहलुओं में आर्थिक आत्मनिर्भरता।

-राजनीतिक आत्मनिर्णय, या मौलिक लोकतंत्र, जिसमें स्थानीय सभाओं (ग्रामीण या शहरी) द्वारा निर्णय लेने पर जोर देने वाली प्रक्रियाएं शामिल हैं।

-सांस्कृतिक और सामाजिक पहचान को बनाए रखना या पुनः स्थापित करना, लेकिन इस तरह से नहीं कि अन्य समुदायों और समूहों की पहचान और विशिष्टता को कमज़ोर किया जाए।

-शिक्षा, स्वास्थ्य, यातायात और संचार जैसे पहलुओं में सामुदायिक नवाचार और प्रबंधन।

स्थानीय पारिस्थितिकीय तंत्रों और प्रजातियों के संरक्षण की परंपराओं को बनाए रखना या पुनर्जीवित करना, जो उन विचारधाराओं या ब्रह्मांड विज्ञान में निहित हैं, जो मनुष्य को प्रकृति का हिस्सा मानते हैं, जो भौतिक-सांस्कृतिक-आध्यात्मिक तरीकों से जीवन के सभी पहलुओं से जुड़ा हुआ है।

ऐसी पहलों के लिए कई प्रयास हुए है, जो महत्वपूर्ण हैं। वैश्वीकृत दुनिया के विपरीत, जहां मेरे उत्पादन और उपभोग के तरीके सैकड़ों या हजारों किलोमीटर दूर के लोगों और वन्य-जीवों को प्रभावित कर सकते हैं, और इसलिए मैं ऐसे प्रभावों से अनभिज्ञ या उदासीन हो सकता हूं, इन पहलों में निरंतर सुधार बहुत छोटे और ज्यादा साफ होते हैं। अपने घर के पिछवाड़े में कचरा फेंकना किसी न किसी समय मेरे लिए ही हानिकारक सिद्ध होगा, लेकिन अगर मैं इसे किसी दूर देश या समुद्र में भेज सकूं तो इसकी संभावना कम है। वैश्वीकृत अर्थव्यवस्था तो अपनी समस्याओं को भावी पीढ़ियों पर थोपने में भी सक्षम है, उदाहरण के लिए, परमाणु कचरे के मामले में; स्थानीय स्तर पर ऐसा करना इतना आसान नहीं है।

इस प्रकार की पहलें ज्ञान, विश्व दृष्टिकोण, खान-पान, भाषाओं, विश्वास और आस्था, कला रूपों आदि की उस अद्भुत विविधता को भी बनाए रखती हैं, जो दुनिया के लिए जरूरी है। प्रकृति की तरह ही, विविधता लचीलेपन का एक महत्वपूर्ण आधार है, जबकि एकरूपता विनाश का कारण बन सकती है। वर्षा-वन को कुछ प्रजातियों के वृक्षारोपण से बदलने से पारिस्थितिकीय तंत्र रोग, आग आदि के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाता है। कृषि में, फसल की एकल खेती अल्पावधि में उत्पादकता (अनाज जैसे एकल तत्वों की) बढ़ा सकती है, लेकिन एक खराब वर्ष पूरे खेत को चौपट कर सकता है, जबकि बहु-फसली खेत कुछ न कुछ तो पैदा करेगा।

इसी प्रकार,एक एकरूप समाज में अनुकूलन की संभावनाएं बहुत कम होती हैं, जो जलवायु संकट, युद्ध आदि से पैदा हुई अनिश्चितताओं के सामने और भी महत्वपूर्ण होती जा रही है।

स्थानीय अर्थव्यवस्थाएं अधिकांश दैनिक जरूरतों (उत्पादों और सेवाओं) का स्थानीय स्तर पर उत्पादन और आदान-प्रदान करके वैश्विक बाजारों पर निर्भरता को काफी हद तक कम कर सकती हैं। इला भट्ट, जिन्होंने विश्व के सबसे बड़े महिला सहकारी आंदोलनों में से एक, सेवा की स्थापना की, ने कल्पना की थी कि ऐसी आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्थाएँ 100 मील के दायरे में स्थापित की जा सकती हैं। सेवा ने अपने कई स्थानीय उद्यमों के माध्यम से इस दिशा में कुछ प्रारंभिक कदम उठाए हैं।

ऐसी कई पहलें आंतरिक असमानताओं (लिंग, जाति, वर्ग, क्षमता आदि) से निपटने की प्रक्रियाओं को भी शामिल करती हैं, क्योंकि इनके बिना वे ज्यादा

शोषणकारी या भेदभावपूर्ण हो सकती हैं। वे ऐसी संरचनाओं और संबंधों को सीधे चुनौती देकर और/या हाशिए पर पड़े वर्गों के आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक अधिकारों और क्षमताओं पर ज़ोर देकर ऐसा करती हैं। उदाहरण के लिए, दक्षिण भारत में महिलाओं के लिए ऋण देने वाली संस्था 'महिला साक्षरता जागरूकता और अधिकार संघ' (मालार) ने अपने 30,000 सदस्यों को आर्थिक रूप से सशक्त बनाकर लिंगभेद से निपटने में मदद की है।

ऐसी कई पहलें बहिष्कारवादी स्थानीयकरण के रूपों को स्पष्ट रूप से अस्वीकार करती हैं, जैसे कि यूरोप (और अब अमेरिका) के कई हिस्सों में प्रवासियों और शरणार्थियों के खिलाफ आंदोलनों में देखी जाने वाली विदेशियों के प्रति नफरत, या दक्षिण एशिया में अल्पसंख्यक धर्मों के लोगों के प्रति शत्रुता। इसके विपरीत, खुला या मौलिक स्थानीयकरण उन प्रवासियों और शरणार्थियों का स्वागत करता है, जिन्हें प्रवेश करने की जरूरत है। यूरोप में 'सॉलिडैरिटी सिटीज़' आंदोलन इसका एक उदाहरण है। अंततः, जैसे-जैसे ऐसे वैकल्पिक उपायों का आंदोलन फैलता है, दीर्घकालिक उम्मीद यह है कि लोगों को उनके अपने क्षेत्रों से बाहर धकेलने वाली परिस्थितियां स्वयं बदल जाएंगी। विश्व भर में समृद्ध, अपेक्षाकृत आत्मनिर्भर समुदाय शांति का एक प्रमुख तत्व हैं, जो अन्य क्षेत्रों पर विजय प्राप्त करने या अपने ही लोगों और प्रकृति का उपनिवेशीकरण करने की जरूरत या इच्छा को काफी हद तक कम करते हैं।

ऐसी पहलों की एक अन्य प्रमुख विशेषता यह है कि वे प्रकृति को शोषक वस्तु मानने के बजाय, संपूर्ण प्रकृति को मानव की ही तरह केंद्र में पुनः स्थापित करती हैं। वे इस बात को पुनः मान्यता देती हैं कि हम प्रकृति का हिस्सा हैं, उससे बाहर नहीं। वे पृथ्वी-आधारित शासन की उन ब्रह्मांडीय अवधारणाओं और प्रथाओं को बनाए रखती हैं या उनसे सीखती हैं, जिनमें मनुष्य और अन्य जीव-जंतु रिश्तेदारी और पारस्परिकता के संबंधों में परस्पर जुड़े होते हैं।

महत्वपूर्ण बात यह है कि ऐसी प्रक्रियाएं जलवायु संकट के प्रति एक महत्वपूर्ण प्रतिक्रिया भी हैं। आर्थिक वैश्वीकरण, जिसमें उत्पादों, सेवाओं और लोगों का विश्व भर में तेजी से आवागमन होता है (जो स्वयं कोरोना वायरस के प्रसार का एक प्रमुख कारक है), उत्सर्जन के सबसे बड़े कारणों में से एक है, जिससे जलवायु परिवर्तन होता है। यहां तक कि जलवायु संकट के प्रमुख 'समाधान', जैसे कि इलेक्ट्रिक वाहनों की ओर रुझान और मेगा-नवीकरणीय ऊर्जा परियोजनाएं, भी महत्वपूर्ण खनिजों और उत्पादों और वैश्विक आवागमन पर निर्भर हैं। स्थानीय आत्मनिर्भरता जितनी अधिक बढ़ेगी, लंबी दूरी के ऐसे आवागमन की आवश्यकता उतनी ही कम होगी। उदाहरण के लिए, ऊर्जा के क्षेत्र में, विकेंद्रीकृत नवीकरण योग्य ऊर्जा की कई प्रौद्योगिकियां पहले से ही मौजूद हैं, जो ऊर्जा खपत पर आत्म-संयम के साथ मिलकर काम करती हैं, जिसकी संभावना तब अधिक होती है जब कोई समुदाय अपनी ऊर्जा स्वयं उत्पन्न करता

है।

विकेंद्रीकृत नवीकरण योग्य ऊर्जा, जैसे कि छत पर सौर ऊर्जा और स्थानीय बायोमास स्रोत, एलपीजी जैसे ईंधनों पर निर्भरता को काफी हद तक कम कर सकते हैं, जो वर्तमान में ईरान द्वारा होर्मुज जलडमरूमध्य की नाकाबंदी के कारण चर्चा में है।

'स्थानीयकरण' की तरह, 'आत्मनिर्भरता' की अवधारणा का भी दुरुपयोग किया जा सकता है। कोविड महामारी के बाद से, सरकार आत्मनिर्भरता की बात कर रही है, लेकिन इसकी अवधारणा समुदायों और समूहों द्वारा बुनियादी जरूरतों को पूरा करने या आत्मनिर्भर बनने से संबंधित नहीं है, बल्कि पूरे भारत के ऊर्जा, भोजन और अन्य जरूरतों में आंतरिक रूप से आत्मनिर्भर होने से संबंधित है। हालांकि यह भी एक सराहनीय लक्ष्य हो सकता है, इस बैनर तले आए लगातार बजटों और योजनाओं में काफी हद तक आंतरिक उपनिवेशीकरण शामिल रहा है, जिसमें विडंबना यह है कि कोयला खनन या मेगा-नवीकरणीय ऊर्जा परियोजनाओं को आदिवासियों (मूल निवासी) या अन्य समुदायों की जमीनों को अधिग्रहीत करना शामिल है, जो पहले से ही अपेक्षाकृत आत्मनिर्भर हैं! इनमें सह-विकल्प की सोच है। यानी विचारों को अपने अनुरूप ढाल लेने की क्षमता है।

क्या इसका मतलब वैश्वीकरण का अंत है?

मौलिक स्थानीयकरण के पक्ष में तर्क देने का अर्थ समुदायों और लोगों के बीच क्षेत्रीय और वैश्विक संबंधों का अंत नहीं है। यह विखंडन और अलगाव की वकालत नहीं है—बिल्कुल भी नहीं। यह पूंजी के वैश्विक वर्चस्व और राज्य की शक्ति को चुनौती देता है, जो पिछले कुछ दशकों में अपनाए गए आर्थिक वैश्वीकरण के प्रमुख घटक हैं। यह सैन्य-औद्योगिक परिसर की वैश्विक पहुंच को चुनौती देता है, जिसका सबसे बुरा रूप ट्रंप ने दिखाया है। और ऐसा करने में, जन आंदोलनों ने स्थानीय से वैश्विक स्तर तक जुड़ाव स्थापित किया है, जिसे वैकल्पिक वैश्वीकरण कहा गया है, जिसमें ऑक्युपाई आंदोलन और विश्व सामाजिक मंच जैसे प्रतिरोध के मंच, या ला वाया कैम्पेसिना और ग्लोबल टेपेस्ट्री ऑफ ऑल्टरनेटिव्स जैसे मौलिक वैकल्पिक मंच शामिल हैं।

वैकल्पिक वैश्वीकरण वैश्विक सांस्कृतिक, सामाजिक और पारिस्थितिक संबंधों को समाहित करता है, और यहां तक कि आर्थिक संबंधों को भी, जो देखभाल, साझाकरण और पारस्परिक सहायता पर आधारित हैं (अर्थव्यवस्था केवल वित्त के बारे में नहीं है)। ऐसे अंतर-सांस्कृतिक और अंतर-भौगोलिक संबंध हजारों वर्षों से मौजूद हैं और इन्होंने दुनिया भर के समाजों को समृद्ध किया है। जब ये गतिविधियां स्थानीय आत्मनिर्भरता को कमजोर करती हैं, शोषणकारी लाभ कमाने और राजनीतिक वर्चस्व स्थापित करने के लिए परिस्थितियां बनाती हैं,

और पृथ्वी की पारिस्थितिकीय अखंडता को खतरे में डालती हैं, तभी इन्हें अस्वीकार्य माना जाना चाहिए। यदि यूरोपीय लोग कोलंबिया से कॉफी प्राप्त करना जारी रखना चाहते हैं, तो यह तब तक ठीक है जब तक इससे कोलंबियाई समुदायों की आर्थिक या पारिस्थितिकीय स्थिति पर कोई प्रतिकूल प्रभाव न पड़े और परिवहन के टिकाऊ साधनों का उपयोग किया जा सके।

'निष्पक्ष व्यापार' के कुछ पहलू इस दिशा में आगे बढ़ने का प्रयास कर रहे हैं। और यदि लोग एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना चाहते हैं, इसलिए नहीं कि वे अभाव और हिंसा की स्थितियों से उजड़ रहे हैं, बल्कि इसलिए कि वे वास्तव में अन्य संस्कृतियों और भौगोलिक क्षेत्रों से आकर्षित हैं—तो यह भी हजारों वर्षों से होता आ रहा है। इसका स्वागत किया जाना चाहिए क्योंकि यह सांस्कृतिक और बौद्धिक संवर्धन और जीवन शैली और ज्ञान के विविध रूपों के बीच पारस्परिक लाभकारी अंतःक्रिया का एक साधन है जो पूरे ग्रह पर मौजूद है।

इस परिवर्तन काल में, लोगों को वर्चस्ववादी शक्तियों से खतरे में होने पर एक-दूसरे के साथ एकजुटता दिखाने के लिए वैश्विक संबंधों की भी आवश्यकता होगी।

शायद तब हम मौलिक स्थानीयकरण को वैकल्पिक वैश्वीकरण, या एक प्रकार के ग्लोकलाइजेशन के साथ जोड़ सकते हैं।

मौजूदा संयुक्त राष्ट्र से परे, अंतर-जन समन्वय और सहयोग के वैश्विक संस्थानों की भी आवश्यकता है, जो कई मायनों में बहुत उपयोगी रहा है, लेकिन राष्ट्र-राज्य सरकारों के हाथों में निर्णय लेने की संरचना के कारण इसकी सीमाएं काफी हद तक सीमित हैं। अभी तक यह स्पष्ट नहीं है कि सत्ता के केंद्रीकरण को रोकने वाली वैश्विक शासन प्रणाली कैसी हो सकती है। लेकिन कई विचार गौर करने लायक हैं, जैसे कि कुर्द कार्यकर्ता-विचारक अब्दुल्ला ओकलान का विश्व लोकतांत्रिक परिसंघ का प्रस्ताव, जिसमें स्थानीय मौलिक लोकतंत्र को इसके मूल आधार के रूप में रखा गया है।

क्या यह संभव है?

वैश्विक वित्त और पूंजी के माध्यम से इतनी जटिल रूप से परस्पर जुड़ी दुनिया में, जहां मौजूदा समय में शक्तिशाली लोगों का दबदबा है, मौजूदा परिदृश्य में यह सब असंभव दिखाई दे सकता है। ये निश्चित रूप से बेहद कठिन और चुनौतीपूर्ण होगा। लेकिन मानव इतिहास में आमूल-चूल व्यवस्थागत परिवर्तन हुए हैं—उदाहरण के लिए, सैकड़ों वर्षों के राजाओं के शासन का अंत, औपनिवेशिक साम्राज्यों का पतन, नारीवादी विचारों और प्रथाओं का उदय, या प्रकृति की आवाज़ों को समाहित करने वाले स्वदेशी और सामुदायिक विचारों का पुनरुद्धार—इन सभी ने दमन की गहरी जड़ें जमा चुकी संरचनाओं को चुनौती दी है और

कुछ मामलों में उन्हें नाटकीय रूप से बदल दिया है।

जैसे-जैसे हमारी वर्तमान विश्व अव्यवस्था के दर्दनाक परिणाम सभी के सामने स्पष्ट होते जा रहे हैं, शायद अधिक लोग आमूल-चूल समाधानों की ओर रुख करेंगे। क्या हममें से प्रत्येक इसमें अपनी भूमिका निभा सकता है? क्या हम कम से कम उन कई जमीनी पहलों का समर्थन और पोषण कर सकते हैं जो गहरे निराशा के माहौल में उम्मीद को जीवित रखने का प्रयास कर रही हैं? या हम केवल इसलिए आत्मसमर्पण कर देंगे क्योंकि हमें लगता है कि सब कुछ समाप्त हो चुका है?

मुझे पता है मेरा जवाब क्या है—मैं हार मानने से इनकार करता हूं।

इस कथा का विशेष रूप से बाबा मायाराम द्वारा विकल्प संगम के लिए अनुवाद किया गया है।

लेखक से **संपर्क** करें.

Story Tags: alternatives , globalisation